

राजस्थान उच्च न्यायालय

जयपुर बेंच

एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 12808/2020

मीठालाल बोहरा पुत्र श्री एम.सी. बोहरा, उम्र लगभग 67 वर्ष, निवासी वार्ड नंबर 1,
गंगापुर सिटी, जिला सवाईमाधोपुर (राजस्थान)

----याचिकाकर्ता

बनाम

- भारत संघ, सचिव, पर्यावरण एवं वन मंत्रालय (एफसी प्रभाग), पर्यावरण भवन,
सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली के माध्यम से।
- राजस्थान राज्य, प्रमुख सचिव, वन विभाग, राजस्थान सरकार सचिवालय, जयपुर
के माध्यम से।
- निदेशक (एफसी), पर्यावरण एवं वन मंत्रालय (एफसी प्रभाग), पर्यावरण भवन,
सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली।
- मुख्य वन संरक्षक (केन्द्रीय), पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार, परिवहन
भवन, लोदी रोड, नई दिल्ली।
- उप वन संरक्षक (केन्द्रीय), पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, क्षेत्रीय कार्यालय, 5 वां
तल, केन्द्रीय भवन, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ।
- निदेशक, खान एवं भूविज्ञान विभाग, शास्त्री सर्किल, उदयपुर।
- खनन अभियंता, खान एवं भूविज्ञान विभाग, करौली।
- उप वन संरक्षक, वन विभाग, करौली।

----उत्तरदाता

याचिकाकर्ता(यों) के लिए : श्री ए.के. शर्मा, वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री विष्णु कांत
शर्मा और श्री रचित शर्मा, अधिवक्ताओं द्वारा
सहायता प्रदान की गई।

प्रतिवादी(ओं) के लिए : श्री.देवेश यादव और श्री.सी.एस.सिन्हा,
श्री.आर.डी.रस्तोगी, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल की
ओर से अधिवक्ता। श्री.जाकिर हुसैन, अतिरिक्त
सरकारी वकील और श्री.सचिन प्रताप सिंह, वकील।

माननीय श्री. न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढांड

08/02/2024

आदेश

रिपोर्ट योग्य

1. इस याचिका को दायर करके, याचिकाकर्ता ने उत्तरदाता के खिलाफ याचिकाकर्ता के पक्ष में 13.99 हेक्टेयर वन भूमि के डायवर्जन के लिए अनुमोदन प्रदान करने के लिए निर्देश देने की मांग की है और याचिकाकर्ता द्वारा उत्तरदाता द्वारा पारित दिनांक 26.02.2020, 25.09.2003 और 06.11.2003 के आक्षेपित पत्रों/संचारों को रद्द करने और अपास्त करने की प्रार्थना की गई है।

2. याचिकाकर्ता के वकील ने कहा कि याचिकाकर्ता खदानों का संचालन कर रहा था और उसके पास खदानों को संचालित करने के लिए एक वैध लाइसेंस था, लेकिन रिट याचिका (सिविल) संख्या 202/1995 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 12.12.1996 द्वारा खनन कार्यों पर रोक लगा दी गई थी। वकील ने कहा कि 15.10.1997 को याचिकाकर्ता ने अपने खनन पट्टे के नवीनीकरण के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया और साथ ही याचिकाकर्ता के पक्ष में 13.99 हेक्टेयर वन भूमि के डायवर्जन की मंजूरी के लिए अनुरोध किया गया था। वकील ने कहा कि काफी समय बीत जाने के बावजूद उत्तरदाता ने याचिकाकर्ता की शिकायत के संबंध में अधिकारियों द्वारा लिए गए निर्णय के बारे में कभी नहीं बताया, हालाँकि याचिकाकर्ता ने कई मौकों पर उत्तरदाता के कार्यालय से संपर्क किया लेकिन आश्वासन के अलावा लिखित में कुछ नहीं किया गया। वकील ने कहा कि अंततः, याचिकाकर्ता ने 15.12.2019 को उत्तरदाता को न्याय की मांग के लिए एक नोटिस दिया और पहली बार, उन्हें 26.02.2020 को पर्यावरण और वन मंत्रालय से एक संचार प्राप्त हुआ, जिसमें यह उल्लेख किया गया था कि याचिकाकर्ता के प्रस्ताव को मंत्रालय ने वर्ष 2003 में 25.09.2003 और 06.11.2003 के आदेश पारित करके खारिज कर दिया था। वकील ने कहा कि इन आदेशों को कभी भी याचिकाकर्ता को नहीं बताया गया और आदेश में कोई कारण नहीं बताया गया है कि क्यों याचिकाकर्ता के प्रस्ताव को खारिज कर दिया गया। वकील ने कहा कि कोई भी तर्कसंगत आदेश पारित नहीं किया गया है और इन परिस्थितियों में, उत्तरदाता की ऐसी कार्रवाई से प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है। इसलिए, इस न्यायालय का हस्तक्षेप वारंट है

3. इसके विपरीत, उत्तरदाता के वकील ने याचिकाकर्ता के वकील द्वारा उठाए गए तर्कों का

विरोध किया और प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता द्वारा पेश प्रस्ताव को उत्तरदाता ने वर्ष 2003 में ही अस्वीकार कर दिया था और याचिकाकर्ता सत्रह वर्षों के लंबे समय तक अपने अधिकारों को लेकर सोए रहे और डेढ़ दशक से अधिक की देरी के बाद, याचिकाकर्ता नींद से जागे और इस रिट याचिका को दायर करने के माध्यम से इस अदालत का दरवाजा खटखटाया। वकील ने प्रस्तुत किया कि वर्तमान रिट याचिका देरी और लापरवाही से ग्रस्त है। वकील ने आगे कहा कि हालांकि 25.09.2003 के आदेश में विस्तृत कारण नहीं बताए गए थे, लेकिन उपरोक्त आदेश पारित करने से पहले, 10.07.2003 को अलग कार्यवाही शुरू की गई थी, जिसमें पाया गया कि याचिकाकर्ता की ओर से उल्लंघन हुए थे भारत संघ के वकील ने प्रस्तुत किया कि मंत्रालय किसी भी तरह से आदेश को बताने के लिए बाध्य नहीं था, क्योंकि भारत संघ और याचिकाकर्ता के बीच कोई सीधा पत्राचार नहीं था क्योंकि इस तरह का मामला राज्य से होकर गुजर रहा था, और राज्य सरकार को 2003 में ही समय से पहले आदेश पारित करने के बारे में सूचित किया गया था। वकील ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता सतर्क नहीं था, इसीलिए वह सत्रह साल से अधिक समय तक अपने अधिकारों को लेकर सोया रहा, इसलिए यह याचिका अकेले इस आधार पर खारिज होने के योग्य है। अपने तर्कों के समर्थन में, उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उड़ीसा राज्य और अन्य बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) के मामले में एलआर और अन्य के माध्यम से पारित निर्णय पर भरोसा रखा है, जिसकी रिपोर्ट 2023 लाइव लॉ (एससी) 527 में दी गई है। वकील ने प्रस्तुत किया कि इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

4. बार में प्रस्तुत किए गए तर्कों को सुना और उन पर विचार किया तथा रिकार्ड में उपलब्ध सामग्री का उपयोग किया।

5. यह तथ्य विवाद में नहीं है कि याचिकाकर्ता ने वर्ष 1997 में राज्य सरकार के समक्ष अपने खनन पट्टे के नवीकरण के साथ-साथ 13.99 हेक्टेयर वन भूमि के अपने पक्ष में डायवर्जन के लिए आवेदन किया था। राज्य सरकार और खान विभाग के साथ-साथ वन विभाग ने याचिकाकर्ता के पक्ष में अनुकूल सिफारिश की और पर्यावरण और वन मंत्रालय को उनके मामले की सिफारिश की। यह तथ्य विवाद में नहीं है कि पर्यावरण और वन मंत्रालय द्वारा इस मामले पर विचार किया गया था और 10.07.2023 को एक विस्तृत आदेश पारित किया गया था, जिसमें इस मामले में इस मामले में कई उल्लंघन पाए गए

थे और इस संबंध में एक तथ्य पत्र दर्ज किया गया था और उक्त तथ्य पत्र के आधार पर, 25.09.2003 को आक्षेपित आदेश पारित किया गया था और इस मामले में इस मामले में मांगी गई मंजूरी को अस्वीकार कर दिया गया था और बाद में, 06.11.2003 को एक आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा इस मामले में इस मामले में मंजूरी नहीं दी गई थी और दोनों आदेशों को पर्यावरण और वन मंत्रालय द्वारा 25.09.2003 और 06.11.2003 के संचार/पत्रों के माध्यम से खान विभाग, राजस्थान राज्य को सूचित किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा ये आदेश पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा याचिकाकर्ता को इसलिए नहीं बताए गए क्योंकि याचिकाकर्ता और मंत्रालय के बीच कोई सीधा संवाद नहीं था और मामला राज्य सरकार से होते हुए केंद्र सरकार के पास जा रहा था और तदनुसार, केंद्र सरकार ने राज्य को ये आदेश भेज दिए। लेकिन अभिलेखों से पता चलता है कि याचिकाकर्ता काफी समय तक चुपचाप बैठा रहा और उसने अपने दावे की स्थिति जानने की ज़हमत नहीं उठाई और डेढ़ दशक से भी ज़्यादा की इतनी बड़ी देरी के लिए कोई उचित स्पष्टीकरण दिए बिना ही वर्ष 2020 में इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया।

6. इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि यह रिट याचिका गंभीर विलंब और लापरवाही से ग्रस्त है। यह न्यायालय विलंब और लापरवाही के बिंदु पर, तय प्रस्ताव पर कानूनी स्थिति का उल्लेख करना न्यायोचित और उचित समझता है।

7. पी.एस.सदाशिवस्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य के मामले में (1975) 1 एससीसी 152 में रिपोर्ट की गई थी, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्धारित किया था कि अपने से कनिष्ठ को पदोन्नत करने के आदेश से व्यथित व्यक्ति को ऐसी पदोन्नति के कम से कम छह महीने या अधिकतम एक वर्ष के भीतर न्यायालय का दरवाजा खटखटाना चाहिए। ऐसा नहीं है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत न्यायालयों के लिए अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए कोई सीमा अवधि है और न ही ऐसा कोई मामला हो सकता है जहां न्यायालय एक निश्चित समय बीतने के बाद किसी मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकते हैं, लेकिन न्यायालयों के लिए यह विवेक का एक अच्छा और बुद्धिमानी भरा प्रयोग होना चाहिए कि वे उन व्यक्तियों के मामले में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इनकार कर दें जो राहत के लिए शीघ्रता से संपर्क नहीं करते हैं।

8. नई दिल्ली नगरपालिका परिषद बनाम पान सिंह एवं अन्य (2007) 9 एससीसी 278 में दर्ज मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि यद्यपि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट याचिका दायर करने के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं है, फिर भी सामान्यतः रिट याचिका एक उचित समय सीमा के भीतर दायर की जानी चाहिए। उक्त मामले में उत्तरदाता ने सत्रह वर्षों के बाद रिट याचिका दायर की थी और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने, जैसा कि पहले कहा गया है, विलंब और लापरवाही को प्रासंगिक कारक मानते हुए, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया, जिसमें विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया गया था।

9. उत्तरांचल राज्य एवं अन्य बनाम श्री शिवचरण सिंह भंडारी एवं अन्य (2013) 12 एस सी सी 179 में दर्ज मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विलंब और लापरवाही से संबंधित मुद्दे पर विचार करते हुए यह टिप्पणी की कि भले ही भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका दायर करने के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं है, फिर भी इसे उचित समय के भीतर दायर किया जाना चाहिए। विलंबित दावा प्रस्तुत करने वाले व्यक्ति को विलंब और लापरवाही के कारण राहत देने से निश्चित रूप से इनकार किया जा सकता है। जो कोई भी अपने अधिकारों की अनदेखी करता है, उसे कष्ट सहना पड़ता है।

10. चेन्नई मेट्रोपॉलिटन वाटर सप्लाई एंड सीवरेज बोर्ड एवं अन्य बनाम टी.टी.मुरली बाबू के मामले में (2014) 4 एससीसी 108 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित राय व्यक्त की:-

"13. सबसे पहले, हम देरी के पहलू पर विचार करेंगे। महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम बलवंत रेगुलर मोटर सर्विस, अमरावती और अन्य, एआईआर 1969 एससी 329 में, न्यायालय ने उस सिद्धांत का उल्लेख किया था जिसे सर बार्न्स पीकॉक ने लिंडसे पेट्रोलियम कंपनी बनाम प्रॉस्पर आर्मस्ट्रांग हर्ड, अब्राम फेयरवॉल और जॉन केम्प, (1874) 5 पीसी 221 में बताया था, जो इस प्रकार है:-

"अब, न्यायाधिकरणों में लापरवाही का सिद्धांत कोई मनमाना या तकनीकी सिद्धांत नहीं है। जहाँ कोई उपाय देना व्यावहारिक रूप से अन्यायपूर्ण होगा, या तो इसलिए कि पक्षकार ने अपने आचरण से ऐसा कुछ किया है जिसे उचित रूप से उसके त्याग के समतुल्य माना जा सकता है, या जहाँ उसने अपने आचरण और

उपेक्षा से, यद्यपि संभवतः उस उपाय का त्याग न करते हुए भी, दूसरे पक्षकार को ऐसी स्थिति में डाल दिया है जिसमें उसे रखना उचित नहीं होगा यदि इन दोनों में से किसी भी मामले में बाद में उपाय का दावा किया जाए, तो समय की चूक और विलंब सबसे महत्वपूर्ण हैं। लेकिन प्रत्येक मामले में, यदि राहत के विरुद्ध कोई तर्क, जो अन्यथा न्यायसंगत होता, केवल विलंब पर आधारित है, और वह विलंब निश्चित रूप से किसी भी परिसीमा अधिनियम द्वारा प्रतिबन्ध नहीं है, तो उस बचाव की वैधता का परीक्षण मूलतः न्यायसंगत सिद्धांतों पर किया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में हमेशा महत्वपूर्ण दो परिस्थितियाँ हैं, विलंब की अवधि और उस अंतराल के दौरान किए गए कार्यों की प्रकृति, जो किसी भी पक्षकार को प्रभावित कर सकती हैं और जहाँ तक उपाय का संबंध है, एक या दूसरे मार्ग को अपनाने में न्याय या अन्याय के बीच संतुलन स्थापित कर सकती हैं।"

15. मध्य प्रदेश राज्य व अन्य आदि आदि बनाम नंदलाल जायसवाल व अन्य आदि आदि, एआईआर 1987 एससी 251 में न्यायालय ने कहा कि यह सर्वविदित है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उचित रिट जारी करने की उच्च न्यायालय की शक्ति विवेकाधीन है और उच्च न्यायालय अपने विवेक का प्रयोग करते हुए आमतौर पर मंदबुद्धि और आलसी या मौन और सुस्त लोगों की सहायता नहीं करता है। इसमें आगे कहा गया है कि यदि याचिकाकर्ता की ओर से याचिका दायर करने में अत्यधिक देरी होती है और इस देरी का संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं दिया जाता है, तो उच्च न्यायालय अपने रिट क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप करने और राहत देने से इनकार कर सकता है। विलंब और लापरवाही के सिद्धांत पर जोर देते हुए कहा गया कि रिट क्षेत्राधिकार के तहत विलम्बित चरण में असाधारण उपाय का सहारा लेने से भ्रम और सार्वजनिक असुविधा होने और अन्याय होने की संभावना है।

16. इस प्रकार, विलंब और लापरवाही के सिद्धांत को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। एक रिट न्यायालय को प्रस्तुत स्पष्टीकरण और उसकी स्वीकार्यता का मूल्यांकन करना आवश्यक है। न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए कि वह एक असाधारण और न्यायसंगत क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर रहा है। एक संवैधानिक न्यायालय के रूप में, नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना उसका कर्तव्य है, लेकिन साथ ही उसे इस प्राथमिक सिद्धांत का भी पालन करना है कि जब कोई पीड़ित व्यक्ति, बिना पर्याप्त कारण के, अपनी इच्छा या फुर्सत से न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है, तो न्यायालय का यह कानूनी दायित्व होगा कि वह इस बात की जाँच करे कि विलम्बित चरण में दायर याचिका पर विचार किया जाना चाहिए या नहीं। ध्यान रहे, देरी न्यायसंगतता के मार्ग में बाधक है। कुछ परिस्थितियों में विलंब और लापरवाही घातक नहीं हो सकती है, लेकिन अधिकांश

परिस्थितियों में अत्यधिक विलंब न्यायालय का दरवाजा खटखटाने वाले वादी के लिए केवल संकट को आमंत्रित करेगा। देरी एक वादी की निष्क्रियता और निष्क्रियता को दर्शाती है "एक वादी जो बुनियादी मानदंडों को भूल गया है, अर्थात्, "टालमटोल समय का सबसे बड़ा चोर है" और दूसरा, कानून किसी को फीनिक्स की तरह सोने और उठने की अनुमति नहीं देता है। देरी खतरे लाती है और लिस को नुकसान पहुंचाती है। ...एक अदालत से ऐसे आलसी व्यक्तियों को रियायत देने की उम्मीद नहीं की जाती है - जो 'कुंभकर्ण' या उस मामले में 'रिप वान विंकल' के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। हमारी सुविचारित राय में, इस तरह की देरी किसी भी रियायत के लायक नहीं है और केवल उक्त आधार पर रिट कोर्ट को याचिका को बिल्कुल दहलीज पर ही फेंक देना चाहिए था।"

11. जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम आर.के.जलपुरी एवं अन्य (2015) 15 एससीसी 602

में दर्ज मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायालय के समक्ष एक विवाद की शुरुआत करते हुए, विलंब और लापरवाही से संबंधित मुद्दे पर विचार किया। यह राय दी गई कि याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए मुद्दे पर विलंब और लापरवाही के कारण गुण-दोष के आधार पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। इससे संबंधित अनुच्छेद नीचे उद्धृत हैं:-

27. उत्तरदाता द्वारा उठाई गई शिकायत का गुण-दोष के आधार पर समाधान करने लायक नहीं है, क्योंकि विलंब और आलस्य का सिद्धांत पहले ही उसके दावे पर मौत की ठंड की तरह टूट चुका है, जो किसी को भी नहीं छोड़ती, यहां तक कि उस व्यक्ति को भी नहीं जो यह विचार रखता है और यह रवैया अपनाता है कि वह मौत से बचने के लिए सो सकता है और अंततः "देवो ग्रेटियस - भगवान का धन्यवाद" कह सकता है।

28. एक और पहलू पर ध्यान देना ज़रूरी है। रिट याचिका पर फैसला सुनाते समय रिट अदालत को दावे की प्रकृति और रिटकर्ता की ओर से हुई अस्पष्टीकृत देरी के प्रति सजग रहना ज़रूरी है। पुराने दावों पर तब तक फैसला नहीं सुनाया जाना चाहिए जब तक कि हस्तक्षेप न करने से गंभीर अन्याय न हो। इस बात पर जोर देने की ज़रूरत नहीं कि वर्तमान मामले में फैसला सुनाना उचित नहीं था। इसे शुरुआत में ही नकार दिया जाना चाहिए, क्योंकि रिटकर्ता ने आधे दशक तक खारिज करने के आदेश को स्वीकार किया था और इस भावना को विकसित किया था कि वह समय को रोक सकता है और हमेशा के लिए निरंतर वर्तमान के दायरे में रह सकता है।"

12. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भारत संघ एवं अन्य बनाम चमन राणा के मामले में (2018) 5 एससीसी 798 में उपर्युक्त दृष्टिकोण का अनुसरण किया गया था।

13. तत्पश्चात, माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने वरिष्ठ मंडल प्रबंधक, भारतीय जीवन बीमा निगम लिमिटेड एवं अन्य बनाम श्री लाल मीणा के मामले में

(2019) 4 एससीसी 479, में विलंब और लापरवाही के सिद्धांत पर विचार करते हुए निम्नानुसार राय व्यक्त की:-

"36. हम यह भी पाते हैं कि अपीलकर्ता कई वर्षों तक चुप रहा और यह न्यायालय, बाद में शील कुमार जैन बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, (2011)12 एससीसी 197 में एक विशेष दृष्टिकोण अपनाते हुए, इस ओर से अपीलकर्ता की तरह पुराने दावे करने का अधिकार नहीं देता। वास्तव में, अपीलकर्ता निर्णय सुनाए जाने के लगभग दो वर्ष बाद तक इस मामले पर सोता रहा।

37. इस प्रकार, अपीलकर्ता द्वारा प्रार्थना के अनुसार राहत पाने के लिए इस न्यायालय में आने का प्रयास स्पष्ट रूप से एक दुस्साहस है, जो अस्वीकार किये जाने योग्य है, और अपील खारिज की जाती है।"

14. भारत कोकिंग कोल लिमिटेड एवं अन्य बनाम श्याम किशोर सिंह के मामले में (2020) 3 एससीसी 411 में रिपोर्ट की गई, देरी और लापरवाही के मुद्दे पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया था, जबकि सेवा रिकॉर्ड में जन्म तिथि में बदलाव की मांग करते हुए देरी से दायर याचिका को खारिज कर दिया गया था।

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारत संघ एवं अन्य बनाम एन. मुरुगेसन एवं अन्य (2022) 2 एससीसी 25 के मामले में विलंब और लापरवाही के मुद्दे पर विचार किया था। इसमें यह माना गया था कि किसी पक्ष द्वारा कानून द्वारा अपेक्षित कार्य करने में की गई लापरवाही उसे राहत या उपचार प्राप्त करने से रोक सकती है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दो आवश्यक कारक निर्धारित किए, पहला, विलंब की अवधि और दूसरा, इस बीच की अवधि में हुए घटनाक्रम। उपचार प्राप्त करने में देरी ऐसे अधिकार का परित्याग मानी जाएगी। उपर्युक्त मामले के प्रासंगिक अनुच्छेद 20 से 22 नीचे दिए गए हैं:

“20. विलंब, लापरवाही और स्वीकृति को नियंत्रित करने वाले सिद्धांत कई अवसरों पर अतिव्यापी और परस्पर जुड़े हुए हैं। हालाँकि, उनके अपने अलग चरित्र और विशिष्ट तत्व हैं। कोई कह सकता है कि विलंब वह वंश है जिसके लिए लापरवाही और स्वीकृति प्रजातियाँ हैं। इसी प्रकार, लापरवाही को स्वीकृति नाम से एक प्रजाति का वंश कहा जा सकता है। हालाँकि, ऐसा मामला हो सकता है जहाँ स्वीकृति शामिल हो, लेकिन लापरवाही नहीं। ये सिद्धांत सामान्य कानून के सिद्धांत हैं, और शायद कोई यह पहचान सकता है कि ये सिद्धांत विभिन्न कानूनों में जगह पाते हैं जो सीमा की अवधि को प्रतिबंधित करते हैं और कुछ परिस्थितियों में क्षमा पर विचार नहीं करते हैं। इन्हें कानून के सख्त

अनुप्रयोग की तुलना में न्यायालय के विवेक की आवश्यकता वाले व्यवहार के माध्यम से लागू किया जाना चाहिए। इन अवधारणाओं को नियंत्रित करने वाला अंतर्निहित सिद्धांत एस्टोपल का होगा। पूर्वाग्रह का प्रश्न भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा है जिस पर न्यायालय को ध्यान देना चाहिए।

21. "लाचेस" शब्द फ्रांसीसी भाषा से लिया गया है जिसका अर्थ है "लापरवाही और ढिलाई"। इस प्रकार, इसमें न्यायसंगत राहत से संबंधित दावे को आगे बढ़ाने में अनुचित देरी या लापरवाही शामिल है, जबकि इससे दूसरे पक्ष को नुकसान पहुँचता है। किसी अधिकार का दावा करते समय कानून द्वारा अपेक्षित कार्य करना किसी पक्ष की ओर से लापरवाही है, और इसलिए, यह उस पक्ष को राहत या उपचार प्राप्त करने में बाधा बन सकता है।

22. दो आवश्यक कारक जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए, वे हैं विलंब की अवधि और अंतराल के दौरान किए गए कार्यों की प्रकृति। जैसा कि कहा गया है, इसमें अंतराल के दौरान स्थिति में परिवर्तन के अलावा, न्यायालय का रुख करने वाले पक्ष की ओर से सहमति भी शामिल होगी। इसलिए, न्यायसम्य न्यायालय के लिए किसी ऐसे पक्ष को उपचार प्रदान करना अनुचित होगा जो न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है जबकि उसके कार्य ऐसे अधिकार के त्याग का संकेत देते हों। अपने आचरण से, उसने दूसरे पक्ष को एक विशेष स्थिति में डाल दिया है, और इसलिए, न्यायालय के समक्ष चुनौती देना अनुचित होगा। इस प्रकार, न्यायसम्य के आधार पर अपने आचरण के लिए उत्तरदायी व्यक्ति को उपचार प्राप्त करने की अनुमति दिए जाने की अपेक्षा नहीं की जाती है।

16. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भारत संघ एवं अन्य बनाम चमन राणा के मामले में (2018) 5 एससीसी 798** के पैरा संख्या 10 में निम्नानुसार निर्णय दिया:-

“10. राहत प्रदान करने के लिए न्यायालय से संपर्क करने में देरी के लिए केवल बार-बार अभ्यावेदन दाखिल करना पर्याप्त स्पर्धीकरण नहीं हो सकता है, जैसा कि गांधीनगर मोटर ट्रांसपोर्ट सोसाइटी बनाम कस्बेकर मामले में मुख्य न्यायाधीश चागला द्वारा निम्नलिखित टिप्पणी करते हुए माना गया था: (एससीसी ऑनलाइन बॉम: एआईआर पृष्ठ 203, पैरा 2)।

"2... अब, हमें यह इंगित करने का अवसर मिला है कि यह न्यायालय याचिका प्रस्तुत करने में केवल उस विलंब को क्षमा करेगा जो याचिकाकर्ता द्वारा उन्हें दिए गए कानूनी उपाय का अनुसरण करने के कारण हुआ है। इस विशेष मामले में, याचिकाकर्ता ने कोई कानूनी उपाय नहीं किया। उन्होंने जो उपाय किया वह कानून-

बाह्य या न्याय-बाह्य था। एक बार सरकार का अंतिम निर्णय दिए जाने के बाद, अभ्यावेदन केवल दया या क्षमादान की अपील है, लेकिन यह उस उपाय का अनुसरण नहीं है जो कानून ने याचिकाकर्ता को दिया था..."

17. स्पष्ट रूप से, रिट याचिका विलंब और लापरवाही के कारण लंबित थी। वादी ने लगभग 17 वर्षों की देरी के बाद इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। वादी की ओर से लापरवाही और रिट याचिका दायर करने में देरी के लिए कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं दिया गया। कानून लंबे समय से उन आलसी वादियों के खिलाफ सख्त है जो लंबे विलंब के बाद इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाते हैं।

18. न्यायालयों ने लगातार यह माना है कि वादी की ओर से की गई देरी और लापरवाही उसे किसी भी राहत के अधिकार से वंचित कर देगी। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कानून को स्पष्टता के साथ स्थापित किया है और उस पर एकरूपता से विचार किया है।

19. इस मुद्दे पर विशेषज्ञों की राय एक जैसी और लंबी है। इस चर्चा से संबंधित विशेषज्ञों को लाभ होगा।

20. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **आर एंड एम ट्रस्ट बनाम कोरमंगला रेजिडेंट्स विजिलेंस ग्रुप और अन्य के मामले में 2005 (3) एससीसी 91** में इस प्रकार निर्णय दिया:-

"इसमें कोई संदेह नहीं है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय विलंब एक बहुत ही महत्वपूर्ण कारक है। हम विलंब के कारण उत्पन्न तीसरे पक्ष के हितों को प्रभावित नहीं कर सकते। वैसे भी, न्यायालय को ऐसे व्यक्ति के बचाव में क्यों आना चाहिए जो अपने अधिकारों के प्रति सजग नहीं है।"

21. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम बलवंत रेगुलर मोटर सर्विस के मामले में एआईआर 1969 एससी 329** में इस प्रकार निर्णय दिया:-

"अब, न्यायाधिकरणों में लापरवाही का सिद्धांत कोई मनमाना या तकनीकी

सिद्धांत नहीं है। जहाँ कोई उपाय देना व्यावहारिक रूप से अन्यायपूर्ण होगा, या तो इसलिए कि पक्षकार ने अपने आचरण से ऐसा कुछ किया है जिसे उचित रूप से उसके त्याग के समतुल्य माना जा सकता है, या जहाँ उसने अपने आचरण और उपेक्षा से, यद्यपि संभवतः उस उपाय का त्याग न करते हुए भी, दूसरे पक्षकार को ऐसी स्थिति में डाल दिया है जिसमें उसे रखना उचित नहीं होगा यदि इन दोनों में से किसी भी मामले में बाद में उपाय का दावा किया जाए, तो समय की चूक और विलंब सबसे महत्वपूर्ण हैं। लेकिन प्रत्येक मामले में, यदि राहत के विरुद्ध कोई तर्क, जो अन्यथा न्यायसंगत होता, केवल विलंब पर आधारित है, और वह विलंब निश्चित रूप से किसी भी परिसीमा अधिनियम द्वारा प्रतिबन्ध नहीं है, तो उस बचाव की वैधता का परीक्षण मूलतः न्यायसंगत सिद्धांतों पर किया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में हमेशा महत्वपूर्ण दो परिस्थितियाँ हैं, विलंब की अवधि और उस अंतराल के दौरान किए गए कार्यों की प्रकृति, जो किसी भी पक्षकार को प्रभावित कर सकती हैं और जहाँ तक उपाय का संबंध है, एक या दूसरे मार्ग को अपनाने में न्याय या अन्याय के बीच संतुलन स्थापित कर सकती हैं।"

22. यदि यह मामला होता कि याचिकाकर्ता अपने अधिकारों के लिए पर्याप्त रूप से सतर्क था, तो वह केंद्र सरकार से संपर्क कर सकता था और वह समय रहते उचित याचिका दायर करके इस न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता था, तो चीजें अलग होतीं, लेकिन वह काफी समय से अपने अधिकारों के बारे में सो रहा था, यानी सत्रह वर्षों से अधिक समय से और इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में सत्रह वर्षों की इतनी अत्यधिक देरी के लिए याचिकाकर्ता द्वारा कोई उचित स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है, इसलिए, याचिकाकर्ता किसी भी राहत का हकदार नहीं है क्योंकि यह रिट याचिका देरी और लापरवाही से ग्रस्त है और इसे केवल इसी आधार पर खारिज किया जाता है।

23. स्थगन आवेदन और सभी लंबित आवेदन, यदि कोई हों, भी खारिज किए जाते हैं।

(अनूप कुमार ढांड), जे.

सोलंकी डी.एस., पी.एस.

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"

Tarun Mehra
Advocate